यौगिक चर्चाएँ

[दिनांक २ नवम्बर १६७० को श्री डा० नारायणदास जी गुलाटी के गृह पर रात्री के ८ बजे दिया गया प्रवचन]

जीते रहो !

देखो मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया हो गया होगा आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहां जो पाठ्य-क्रम है वह सदैव विचित्रता में परिणत रहता है क्योंकि पाठ्य क्रम की जो पद्धति है वह आर्ष मानी गई है। इस पद्धति में मानवीयता का सुगठित विचार होता है। जब वेद के गर्भ में जाने का प्रयास करते हैं तो उस समय हमारा जीवन महानता को प्राप्त होने लगता है। परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान सदैव महानता में परिणत रहता है। मैंने इससे पूर्व शब्दों में कहा था कि मेरी माता नहीं जानती कि तेरे गर्भस्थल में कौन रचना कर रहा है। वह कितना वैज्ञानिक है। अन्ध-कूप में मानव जैसे शरीर का निर्माण कर रहा है परन्तु भोली माता को यह प्रतीत नहीं होता कि कौन रचना कर रहा है। तो आज हम उस अपने महान् प्यारे प्रभु का गुण गान गाने के लिये सदैव तत्पर होते रहें क्योंकि इसी से मानव को आत्मशान्ति प्राप्त होती है।

बेटा ! मुझे स्मरण है महर्षि भुंजु जी महाराज कितने महान् विज्ञान में सदैव परणित रहते थे । वह शण्डिल्य गोत्र में उत्पन्न हुये थे । महर्षि सौपंग गृति महाराज उनके पिता कहलाते थे । वह सदैव ज्ञान विज्ञान में परिणत रहते थे क्योंकि यह उनका जन्म सिद्ध अधिकार था । हमारे यहां ऋषि-मुनियों का जो अनुपम विचार होता है, भूमिका होती है उसमें ही उसकी प्रतिष्ठा, मानवीयता सदैव परिणत होती है । हमारे यहां परम्परागतों से ही उस ज्ञान और विज्ञान के ऊपर बहुत ही बल दिया जाता है । कहीं आयु का विज्ञान है, कहीं मानो परमाणुवाद का ज्ञान विज्ञान है । इसी प्रकार कहीं अणु का है, कहीं विभु में मानव पहुंच जाता है । मानव यह विचारने लगता है कि हमारा जो अन्तर-आत्मा है, परमात्मा वह अणु है, जो विभु है इस सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न प्रकार की विवेचना प्रारम्भ होने लगती है । मानव के मस्तिष्क में एक नवीन से नवीन वार्ता प्रारम्भ होने लगती हैं जब उस मानव का हृदय और मस्तिष्क दोनों का समन्वय होने लगता है ।

आज मैं कुछ सूक्ष्म सा मनों की प्रकृतियों के ऊपर विचार विनिमय करना चाहता हूं संसारमें मानवका हृदय और मस्तिष्क कैसे एकाग्र होता है । इसके ऊपर विचार-विनिमय करना है । जब मानव का हृदय और मस्तिष्क, दोनों का समन्वय हो जाता है उस समय मानव की प्रवृत्तियों में कितना ज्ञान व विज्ञान और प्रभु के सम्बन्ध में, कितनी उसकी अगाध श्रद्धा उत्पन्न होने लगती है, मैं इस सम्बन्ध में कुछ सूक्ष्म-सी विवेचना करने वाला हूँ ।

बेटा ! मानव का हृदय और मस्तिष्क उस समय एकाग्र होने लगता है जब मानव की संसार की जो इच्छायें होती हैं,

संसार का जो वैभव होता है, संसार की नाना प्रकार की अप्रेत होती है, भौतिकवाद रोता है जब वह उनको आने में संकुचित कर लेता है, उस समय मानो हृदय में विशालता आनी प्रारम्भ हो जाती है। हृदय कैसे विशाल होता है? मानव का हृदय विशालता में उस काल में आता है जब उसके विचारों में एक महान् उदारता का, ज्ञान का, विचार का एक महान् वृक्ष उत्पन्न हो जाता है। जैसे एक मेरी पुत्री है परन्तु वह पुत्री किसी ब्रह्मचारी के दर्शनों का पान कर रही है, उसका सौन्दर्य, उसकी प्रतिभा अपने में समेट लेती है उस समय वह पुत्री विचारती है कि यह ब्रह्मचारी कितना सुन्दर है, इसका सौन्दर्य उसके मस्तिष्क में परिणत हो जाता है परन्तु जब मैं अपनी पुत्री से यह प्राप्त करने लगता हूं कि हे बालिका! आज तू इस ब्रह्मचारी को दृष्टिपात कर कि इसमें वास्तविकता क्या है तो उसका जो हृदय है जब विशालता में परिणत होता है तो वह कहती है कि इस ब्रह्मचारी की प्रतिमा को दृष्टिपात करके मुझे प्रभु का विज्ञान स्मरण आने लगता है। बेटा! प्रभु का विज्ञान कितना शिरोमणि है? वह उच्चारण करती है कि मुझे प्रभु का ज्ञान होता है क्योंकि मेरे प्यारे प्रभु ने कितना सुन्दर लेपन किया है, कहां से चक्षुओं का निर्माण किया है, किस धातु को एकत्रित किया है, कहां कहां से लाकर के प्रभु ने यह सुन्दर मानव शरीर निर्माण कर दिया है। तो बेटा! जब वह पुत्री सदैव अपने विशाल हृदय से विचार विनिमय करती है तो उसका हृदय और मस्तिष्क दोनों में ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा आ जाती है, दोनों का समन्वय होने लगता है।

मेरे प्यारे ऋषिवर! मस्तिष्क के जितने जागरूक तन्तु हैं उनमें हमारा एक ब्रह्मरन्ध्र नाम का तन्तु होता है। उस

ब्रह्मरन्ध्र में नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों से सम्बन्धी जो सूक्ष्म-सूक्ष्म वाहक नाड़ियां होती हैं उनका सम्बन्ध लोक-लोकान्तरों से होने लगता है। एक भौतिक विज्ञान वेत्ता नाना प्रकार के परमाणुओं को जानता हुआ, उनमें जाता हुआ अपने ब्रह्मरन्ध्र में जो नाना प्रकार का अकृत देखो जिसको लघु मस्तिष्क कहते हैं, हिरात मस्तिष्क भी कहते हैं, उस मस्तिष्क में ऐसे तन्तुओं का जन्म हो जाता है जिसका सम्बन्ध मानो नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों से हो। मैं एक सार्वभौम सिद्धांत तुम्हारे सन्मुख प्रकट किया करता हूं कि यदि मानव के मस्तिष्क में लोक-लोकान्तरों के जानने वाले यन्त्र नहीं होंगे तो मानव लोक-लोकान्तरों को किसी काल में जान ही नहीं पाता, न उनके ऊपर वह टिप्पणी ही कर पाता है।

मैं आज इस वाक्य को कहां ले गया! मैं कल के वाक्यों में तुम्हें बालक नचिकेता की चर्चा प्रकट कर रहा था। जब बालक नचिकेता से आचार्य ने यह कहा कि हे ब्रह्मचारी! तू संसार के राष्ट्र को क्यों नहीं स्वीकार करता है, संसार के वैभव को क्यों अपने में नहीं अपनाता है, संसार का राष्ट्र स्वीकार कर जिसमें नाना प्रकार की पत्नियां हैं इसको क्यों नहीं स्वीकार करते हो। बालक नचिकेता ने कितने सुन्दर शब्दों में कहा था, जब उन्हें आठवां वर्ष थारम्भ था, उद्दालक गोत्र में उत्पन्न होने वाले पवित्र ब्रह्मचारी ने यह कहा प्रभु! आज मुझे ससार का वैभव दे रहे हैं, नाना पत्नियां, राष्ट्र और अश्व मेरे लिये नियुक्त कर रहे हैं परन्तु प्रभु! यह आज हैं कल यह नहीं होंगे। मैं यह चाहता हूं कि जब आत्मा इस शरीर को त्याग कर जाये तो

आत्मा के साथ में वह महान् ज्ञान होना चाहिये, वह प्रकाश होना चाहिये जिससे प्रभु ! यह संसार में सदैव ही बना रहे। मेरे जीवन के साथ में बना रहे मानो मैं संसार में जन्म लेने वाला बनूं अथवा न बनूं परन्तु मेरा ऐसा ही जीवन बना रहे।

ऐसा वाक्य जब बालक नचिकेता ने प्रकट किया तो यमाचार्य ने अपने मस्तिष्क में यह जान लिया कि वास्तव में इस मधु विद्या का यह ब्रह्मचारी अधिकारी है, इसी को जानने के लिये इच्छुक है। मैं इन वाक्यों की पुनरुक्ति करने नहीं जा रहा हूं। वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि बालक नचिकेता के प्रश्नों का उत्तर देते हुये उन्होंने तीन प्रकार के शरीरों की विवेचना करनी प्रारम्भ कर दी उन्होंने कहा कि हे ब्रह्मचारी ! तुम्हें यह प्रतीत होगा कि हमारा यह जो स्थूल शरीर है इसमें पार्थिव तत्व प्रधान माना गया है मानो यह जो पार्थिव तत्व वाला शरीर है उसको हमारे यहां स्थूल शरीर कहा जाता है इसमें क्षुधा है और तृष्णा है, नाना प्रकार के दुःख और सुख का अनुभव करता है। इसमें अपान वायु अपना कार्य कर रहा है और उदान अपना कार्य कर रहा है, व्यान अपना कार्य कर रहा है। इसी प्रकार प्राण इसमें गति कर रहा है। आज हे बालक नचिकेता ! तुम्हें प्रतीत होना चाहिये कि मानव के एक श्वास की गति में कितने परमाणु उसके साथ में जाते हैं। आचार्य ने ऐसा कहा था कि वास्तव में मैं इसको जानने वाला हूं कि मानव के एक श्वास में कितने परमाणु जाते हैं। उन्होंने कहा कि हे बालक ! आज तुम उसको जानना चाहते हो तो निर्णय करा देता हूँ परन्तु यह जो परमाणुवाद है इसको क्यों जानना चाहते हो ?

बालक ने कहा कि प्रभु ! मैं इसलिये जानना चाहता हूं क्योंकि इसमें सर्वत्र संसार का विज्ञान है, आत्म विज्ञान है, इसी में मानव के जीवन की सुन्दर परिक्रिया रहती है इसीलिये मैं उसको जानने के लिये सदैव उत्सुक रहता हूं। यमाचार्य ने बालक नचिकेता से कहा कि हे ब्रह्मचारी ! जब मानव एक श्वास लेता है तो उसमें एक खरब पांच अरब पांचसौ बावन परमाणु तो वायु के जाते हैं, इतने ही परमाणु अग्नि के जाते हैं और इतने ही परमाणु जल के जाते हैं, इतने ही परमाणु अन्तरिक्ष के जाते हैं और २ खरब ६५ अरब ९२ करोड़ २६ लाख ४६ हजार पृथ्वीके परमाणु माने जाते हैं। इतने परमाणु मानव के एक श्वास में इस मानव शरीर से पृथक् हो जाते हैं और इतने परमाणु मानो देखो अन्तरिक्ष से मानव के शरीर में धारण हो जाते हैं जिससे मानव का जीवन संचारित रहता है, मानव के जीवन को सुन्दर परिस्थिति और परिश्रमफल रहता है।

इसी प्रकार ब्रह्मचारी ने कहा प्रभु ! वास्तव में मैं यह और जानना चाहता हूं कि श्वास के जाने का अभिप्राय क्या है ? बालक नचिकेता से यमाचार्य ने कहा कि हे बालक नचिकेता ! जब यह आत्मा इस शरीर को त्याग करके जाता है तो उस समय सत्रह तत्वों का शरीर माना जाता है। सत्रह तत्व होते हैं—पांच ज्ञानेन्द्रियां होती हैं, पांच प्राण होते हैं उसके साथ-साथ पांच तन्मात्रायें होती हैं, मन और बुद्धि कहलाया जाता है। इस शरीर को त्याग करके यह सत्रह तत्व इसके साथ जाते हैं। इन्हीं के गर्भ में चित्त होता है, अहङ्कार होता है जो ज्ञानेद्रिन्यों का प्रतिनिधि माना गया है, कुछ तन्मात्राओं का

प्रतिनिधि माना गया है। इसी प्रकार मानो श्वासों की गति के साथ-साथ उन श्वासों के परमाणुओं को जो वैज्ञानिक जान लेता है वह संसार में मानव शरीर का निर्माण कर सकता है। मानव शरीर को बिना माता पिता के गर्भ के ही उन परमाणुओं को एकत्रित करने की क्षमता योगी में आ जाती है।

मुझे स्मरण आता रहता है संसार में जीवन मुक्त किसे कहा जाता है। हमारे यहां योगियों की तीन प्रकार की तो विशेष गति होती हैं परन्तु चतुर्थ प्रकार की गति अस्वेत कहलाई गई है। ऐसा कहा जाता है, यौगिक आचार्यों ने कहा है कि एक गति तो योगी को जीवनमुक्त होती है, एक सन्वेवनी होती है, एक जनता-जनार्दन में समाविष्ट होती है, एक सौमनी होती है और एक इन्द्र केतु होती है। यह नाना प्रकार की गति होती हैं योगियों की।

जीवनमुक्त की गति मैं वर्णन करना चाहता हूं और समय मुझे इतनी आज्ञा नहीं दे रहा है। जीवनमुक्त उस प्राणी को कहा जाता है जो मानव अपने इस स्थूल शरीर की परिक्रिया को जान लेता है। श्वासों को गति में उस मानव की प्रवृत्ति हो जाती है। आज कोई मानव योगी बनना चाहता है तो अपने मानव शरीर के अङ्ग प्रत्येक को "ओ" रूपी धागे से पिरो देना चाहिये। "ओ" रूपी धागे से कौन पिरोता है? जब प्रत्येक श्वास के साथ में "ओ" का तारतम्य लग जाता है जैसे परमात्मा की जो ऋत है यह प्रत्येक लोक-लोकान्तरों में पिरोई हुई है। जैसे माला में मनका होता है इसी प्रकार मानव के प्रत्येक श्वास के साथ में मस्तिष्क और हृदय दोनों

का समन्वय करने वाला दोनों को मिलान करने वाला एक 'ओं' रूपी धागा होता है जैसे मनकों को माला के रूप में परिणत कर देता है, जैसे लोक-लोकान्तरों को सौर मण्डलों के रूपों में परिणत कर देता है, जैसे आकाश गंगा का निर्माण हो जाता है इसी प्रकार आज हम इस महानता को विचार-विनिमय करने वाले बनें। हमारा तारतम्य होना चाहिये।

बेटा! मैं साधकों की वार्त्ता प्रकट करना नहीं चाहता हूं। मैं प्रभु के विज्ञान की चर्चा कर रहा हूं। प्रभु का कितना विशाल विज्ञान है। जीवनमुक्त प्राणियों की विवेचना कर रहा हूँ। जीवनमुक्त कौन होते हैं? जीवनमुक्त वह प्राणी होते हैं जिनको देखो पाप और पुण्य दोनों व्यापक नहीं होते। दोनों के प्रभाव में वह नहीं आ पाता। वह योगी कैसा होता है? आज वह स्थूल शरीर को धारण करना चाहता है तो बिना माता के गर्भ के ही स्थूल शरीर को धारण कर लेता है। कैसे कर लेता है? क्योंकि वह जो उसका परमाणु-वाद प्राण के द्वारा, श्वासों की गतिके द्वारा जो वायु मण्डल में रमण कर रहा है, विद्युत में रमण कर रहा है, द्यौलोकों में उसकी प्रतिष्ठा हो रही है, उसी में वह रमण कर रहा है।

बेटा! उन परमाणुओं को एकत्रित कर लेता है। एकत्रित करके वह स्थूल रूप में भी परिणित हो जाता है और एक क्षण समय में उनको त्यागने वाला भी बन जाता है ऐसा मुझे योगियों से प्राप्त हुआ है। वेदों के मन्त्रों से भी कुछ इस प्रकार की प्रतिभा मानव को प्रायः प्राप्त होती रही। आज मैं इस सम्बन्ध में अधिक विवेचना देना नहीं चाहता हूं न इन वाक्यों को अधिक गम्भीर बनाना चाहता हूं।

जीवनमुक्त वही प्राणी होते हैं जो देखो परमाणुवाद पर

गतिशील हो जाते हैं उनका आधिपत्य उन पर हो जाता है जैसे भौतिक विज्ञानवेत्ता मगल की यात्रा करने जा रहा है परन्तु मंगल में जाने वाले जो यन्त्र हैं उन पर जब तक उनका आधिपत्य नहीं होता तब तक मंगल की यात्रा नहीं हो पाती। इसी प्रकार वह जो जीवनमुक्त योगी होते हैं उनके लिये वह जो परमाणु रूपी यन्त्र है मानो उन यन्त्रों को एकत्रित किया, वायु के परमाणु कितनी मात्रा में होने चाहियें; जल परमाणु कितनी मात्रा म होने चाहियें; इनका मिलान भी देखो हृदय और मस्तिष्क दोनों की एकता वाला जो महान् होता है इनको एकाग्र करके उनके लिये चन्द्र यात्रा सहज हो जाती है क्योंकि चन्द्रमा ही उनका शरीर बन जाता है; सूर्य मण्डल उनका शरीर बन जाता है मुझे तो ऐसा दृष्टिपात होता रहता है। परन्तु जब मैं यौगिक क्षेत्र में जाता हूं; विशालता के क्षेत्र में जाता हूं तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है। मेरे प्यारे महानन्द जी ने कई काल में प्रकट कराते हुये कहा है कि भौतिक विद्वान् नाना प्रकार के परमाणुवाद में गति कर रहा है। आग्नेय शस्त्रों का निर्माण कर रहा है; मानो चन्द्रमा में जाने वाले यन्त्रों के यातायात बन गये हैं। मैंने तो इस सम्बन्ध में अधिक विवेचना प्रकट नहीं करनी है केवल एक वाक्य यह प्रकट करना है कि यौगिक जो विज्ञान है; आत्मिक जो विज्ञान है वह मानो जहां भौतिकवाद समाप्त होता है वहां से आध्यात्मिकवाद का प्रारम्भ करता है। मेरे प्यारे ऋषिवर! वह प्रारम्भ किस काल में होता है जब यह भौतिक विज्ञान परमाणु विज्ञान की समाप्ति प्रारम्भ हो जाती है। आज तक बेटा! इतना समय हो गया सृष्टि के प्रारम्भ को, कोई वैज्ञानिक ऐसा उत्पन्न नहीं हुआ जिसने अपने यन्त्रों से आत्मा को

दृष्टिपात कर लिया हो; जो चेतना मानव के शरीर में दृष्टिपात करती रहती है वैज्ञानिक दृष्टिपात नहीं कर सका है। वह इतनी सूक्ष्म है और विशालता उसमें कितनी होती है कि सर्वश ब्रह्माण्ड का ज्ञान और विज्ञान ओत प्रोत रहता है।

आओ मेरे प्यारे ऋषिवर! जब मानव व्यान प्राण के ऊपर अध्ययन करना प्रारम्भ कर देता है, व्यान प्राण का जो क्षेत्र है वह कंठ से ऊपर का माना गया है। व्यान प्राण का सम्बन्ध नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों से होता है। जब मानव का हृदय और मस्तिष्क और व्यान की धारा उनके साथ में रमण करने लगती है तो ब्रह्मरन्ध्र में जो नाना प्रकार की सूक्ष्म सूक्ष्म वाहक नाड़ियां होती हैं वह जागरूक हो जाती हैं। मानव के मस्तिष्क में कुछ तो मस्तिष्क में लोभ के कारण मानो कामना के कारण नाना प्रकार के कारण मानव के मस्तिष्क के जो तन्तु हैं वह बहुत से ऐसे तन्तु हैं जो किसी काल में जागरूक ही नहीं होते और किन प्राणियों के नहीं होते जिन प्राणियों के द्वारा यौगिकता नहीं होती, जिन प्राणियों के द्वारा घृणा के क्षेत्र बने रहते हैं। आचार्यों ने कहा है सबसे महान् पाप मानव वह करता है जो घृणा करता है। घृणा का जो माध्यम है वह मानव की बुद्धि को नष्ट करता रहता है क्योंकि मानव के द्वारा नाना प्रकार के जो विशाल प्रकाशवाले तन्तु होते हैं वह सब भस्म हो जाते हैं और भस्मीभूत होने के कारण उस मानव का विकाश नहीं हो पाता। मानव के मस्तिष्क का विकाश उस काल में होता है जब ब्रह्मचर्य उसके द्वारा होता है। ब्रह्मचर्य की गति के द्वारा व्यानप्राण के साथ२ ब्रह्मचर्य की

जब ऊर्ध्वा गति हो जाती है तो नाना प्रकार के तन्तु जागरूक हो जाते हैं। वह जो तन्तु हैं वही तन्तु जागरूक होकर नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में मानव की मनोभावना चलायमान हो जाती हैं जैसे मन कामवासना पर चलायमान हो जाता है, क्रोध पर चलायमान हो जाता है, घृणा पर चलायमान हो जाता है, विशाल गति वाला बन जाता है। ऐसे ही ब्रह्मचर्य के द्वारा व्यान प्राण, समान प्राण और मन इन सबका जब तारतम्य लग करके जब मानव के मस्तिष्क और हृदय का दोनों का मिलान हो जाता है तो नाना प्रकार के लोक-लोकान्तरों में उस मानव का यातायात स्पष्ट हो जाता है।

आओ मेरे प्यारे ऋषिवर ! मैं इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा नहीं करना चाहता हूं। केवल वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय एक ही है कि मानव को अपनी मानवीयता पर कितना गौरव होना चाहिये। परमात्मा के विज्ञान पर विचार तो करो कि परमात्मा का विज्ञान कितना विशाल है, उसने कितनी सुन्दर मानव की रचना की है। मानव की रचना करते हुये क्या-क्या नहीं किया मानव के लिये; परन्तु मानव महान् अपनी उस अग्नि में अपने मानवत्व को ऐसे भस्म कर देता है जैसे अग्नि ईंधन को भस्म कर देती है ऐसे यह जो संसार-रूपी चक्र है, संसार रूपी जो घृणा है इसमें अपने को ऐसा भस्म कर देता है जैसे मानव कृत में अपनेपन को नष्ट करता रहता है। अग्नि सामग्री को यज्ञशाला में भस्म कर देती है इसी प्रकार मानव कहीं घृणा के द्वारा कामना के द्वारा अपने मस्तिष्क को संकुचित बना लेता है। जिसका मस्तिष्क संकुचित हो जाता है उसके मस्तिष्क और हृदय का मिलान नहीं हो

पाता, वह अनेनेपन में नास्तिक भी बन जाते हैं, प्रभु की महत्ता को त्याग देता है अपनेपन में वह इतने रूढ़िवादी बन जाते हैं कि वह विशाल हृदय से संसार को दृष्टिपात ही नहीं कर पाते।

बेटा! मैं वाक्य उच्चारण करता हुआ दूर चला गया हूं। वाक्य यह प्रारम्भ कर रहा था कि बालक नचिकेता से यमाचार्य ने कहा कि हे ब्रह्मचारी जब यह आत्मा इस शरीर को त्यागता है तो उस समय यह आत्मा सत्रह तत्वों का कहलाता है, सूक्ष्म शरीर कहलाता है। सूक्ष्म शरीर ऐसा शरीर है जो वायु में रमण करने वाला होता है।

वह जो चेतना है वह सत्रह तत्वों के साथ में रमण करता है। मानव के जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार उस शरीर के साथ साथ होते हैं। मुझे स्मरण है करोड़ों-करोड़ों जन्मों के संस्कार उसमें ओत प्रोत होते हैं। जब वह महान् इस सूक्ष्म शरीर को भी यह आत्मा त्याग देता है—कैसे त्याग देता है? मानो जिस समय यह सत्रह तत्व भी पांचों प्राण, पांच ज्ञानेन्द्रिय पांचतन्मात्रा और बुद्धि तो जैसे प्रलयकाल में एक महत् तत्व बन करके परमात्मा के गर्भ में परिणत हो जाता है इसी प्रकार उस समय जन्म-जन्मान्तरों के संस्कार नष्ट हो जाते हैं, भस्म हो जाते हैं उज्ज्वल कर्म करते हुये। उज्ज्वलता में, आत्म शान्ति में, परमात्मा के द्वारा जाने पर यही अन्तर-आत्मा कारण लिंग में चली जाती है जिसको हमारे यहां कारणशरीर कहा जाता है। कारणशरीर वह कहलाता है जिसमें केवल बेटा! गाढ़निद्रा होती है। ज्ञान और प्रयत्न भी आत्मा के गर्भ में परिणत हो जाते हैं क्योंकि आत्मा के संसार में दो

ही गुण कहलाये गये हैं ज्ञान और प्रयत्न । ज्ञान और प्रयत्न ही उसका भौतिक रूप बन जाता है जैसे गुण और गुणी होते हैं दोनों कदापि भी पृथक नहीं होते । गुण गुणी में परिणत रहते हैं; दोनों एक ही कहलाते हैं । इसी प्रकार आत्मा के अन्तः-कृति वही आत्मा का सात्विक गुण माना गया है । केवल उस समय ज्ञान और प्रयत्न रहता है ज्ञान प्रयत्न के साथ में वह भी एक होकरके परमात्मा की महान् उस चेतना में रमण करने लगता है । आनन्द को प्राप्त हो जाता हैं संसार में आनन्द ही आनन्द प्रतीत होने लगता है ।

यह है आज का हमारा वाक्य । आज मैं कोई अधिक चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ । मैंने कई काल में मानव जीवन के निर्माण की चर्चा की है । आत्मा कैसे शरीर में आता है, कैसे विकाश होता है कैसे मानव के जीवन का विभाजन होता है यह मैंने कई काल में अपनी विवेचना प्रकट की हैं । आज तो केवल यह वाक्य प्रकट किया कि आज हम इस आत्मा को जानने का प्रयास करें । यह आत्मा इस मानव शरीर को त्याग देता है. त्याग करके तीन प्रकार की वायु होती हैं उनमें रमण करने लगता है । सबसे प्रथम वायु जिसको यम नाम की वायु कहा जाता है । यम नाम की वायु वह होती है जिसमें यह आत्मा प्रथम जाता है । यमराज उसे कहा जाता है । यमात्रह्म लोकाः प्रमा अस्ति सुप्रजाः" जिसमें आत्मा रमण किया करता है, वह यम कहलाता है यमराज के द्वारा जिसको हमारे यहाँ यमराज कहा जाता है । उस समय इस आत्मा का और वायु का दोनों का मन्थन होता है । उसके पश्चात (यदि आत्मा के साथ में सात्विक गुण अधिक हैं तो यह सौनतिति वायु में चला जाता है । सौनतिति वायु में जब आत्मा चला जाता है

तो वहाँ इसकी गति और विशाल बन जाती है और यदि देव-वत् कर्म होते हैं आत्मा के साथ में तो देवआत्मा में जिसको हमारे यहां पितर आत्मा कहा जाता है जैसा मैंने कई काल में प्रकट किया है जैसे कणाद, गौतम शाण्डिल्य ऋषि, महर्षि भारद्वाज, अपरेति ऋषि आदि आदि ऋषियों की आत्मा जो वायु मण्डल में रमण किया करती है उन देवत् आत्माओं में वह आत्मा रमण करने लगता है। समय पर जितना उसका देवत् कर्म है उसके अनुसार वह उन आत्माओं में रमण करता हुआ पुनः संसार चक्र में उन आत्माओं का प्रादुर्भाव हो जाता है, संसार में आवागमन पुनः से हो जाता है।

मैं आत्मा के सम्बन्ध में इतना अधिक उच्चारण नहीं करना चाहता हूं। वेद इस सम्बन्ध में क्या कहता है। वेद कहता है आत्मा के साथ जो संस्कार हैं उनके कारण मानव का शरीर मानव को प्राप्त होता है। यदि संस्कार कोई भी नहीं होगा तो संसार में जन्म होने का कोई कारण बना ही नहीं करता है क्योंकि बिना संस्कार के मानव के जीवन में और आत्मा को आने की आवश्यकता ही कोई नहीं रहती। परमात्मा की प्रतिमा के साथ वह जो कर्म से पिरोया हुआ है मानों ज्ञान और प्रयत्न के द्वारा जो आत्मा पिरोया हुआ है जो उसका विशेष गुण माना गया है उसी के कारण संसार में आवागमन का चक्र बना करता है।

तो मुनिवरो ! मैं आज अधिक विवेचना नहीं करना चाहता हूँ। वाक्य उच्चारण करने का अभिप्रायः यह है कि आज हम पितर आत्म लोक को जानें और देववत् को जानें। आज हम यम नाम के लोक को जानें जहाँ हमारा आत्मा रमण करता

रहता है। आज हम आत्मवेत्ता बनने का प्रयास करें। आज मानव हृदय और मस्तिष्क दोनों का समन्वय करना चाहता है तो उसे सबसे प्रथम पांच वस्तु त्यागनी होंगी। बेटा! जिसके द्वारा घृणा घृणा को त्यागना है, कामवासना है उसे त्यागना है। उसके पश्चात् जो अधिक मद होता है अभिमान को त्यागना है, अपमान को त्यागना है चारों वस्तुओं को जो मानव त्याग देता है, उसका मस्तिष्क और हृदय दोनों में विशालता आ जाती है। व्यान नाम का प्राण महान् विज्ञान की वार्ता विचारने लगता है जब योगी समाधिस्थ होता है। हमारे यहां कई प्रकार की समाधियों का विवरण आता है। एक निर्विकल्प समाधि कही जाती है। निर्विकल्प समाधि वह होती है जहाँ परमात्मा का चिन्तन करते-करते मानव को यह प्रतीत नहीं होता कि यह जगत् भी कोई जगत् है। उसके पश्चात् एक अपरात सतसन् समाधि होती है जिस में मानव समाधिस्थ हो करके जड़वत् हो जाता है। जड़वत् ऐसा हो जाता है कि उसे संसार का तो बोध होता नहीं, शरीर का भी उसे बोध नहीं होता। उसके पश्चात् एक वह समाधि होती है जो आत्मा को प्राण के द्वारा मानो अपनी आत्मा का तारतम्य लगा करके वह प्राण और आत्मा दोनों का मानो जैसे सुषुप्ति अवस्था होती है, सुषुप्ति अवस्था में जैसे जागरूक में आत्मा का सम्बन्ध नेत्रों से विशेषकर रहता है उसके पश्चात् स्वप्न अवस्था में आत्मा का सम्बन्ध मन के द्वारा रहता है और सुषुप्ति अवस्था में इस आत्मा का सम्बन्ध प्राण के द्वारा होता है। प्राण के द्वारा गमन करता रहता है और जीवन का सर्वत्र व्यापार शान्त हो जाता है। इसी प्रकार तीन प्रकार की विशेष समाधियों का वर्णन आता है जैसे

जागरूक होते हैं और जागरूकसमाधि निर्विकल्प मानीगई है और स्वप्न अवस्था के सम्बन्धि जो मानो कल्पना है वह ब्रह्मांण्ड का विस्तार रूप धारण करना है। जैसे स्वप्न में मानव मानव द्वारा शरीर में पत्नियां नहीं होती राष्ट्र नहीं होता परन्तु यह मानव स्वतः उनका निर्माण करता रहता है। स्वप्न अवस्था में द्रव्य नहीं होता शरीर में परन्तु द्रव्य मानव के द्वारा है वह मन की प्रतिमा है जो संसार की एक नवीन रचना करने लगता है। निर्धन से धनवान् बन जाता है और धनी से निर्धन बन जाता है। जैसे तुम्हें स्मरण होगा राजा जनक को एक स्वप्न हुआ था। वह ऐसा ही स्वप्न था कि उसी स्वप्न के कारण वह निर्धन बन गया था। आयुर्वेद पंडित को क्या, ब्रह्मवेत्ताओं को क्या, आत्मवेत्ताओं को क्या, योगियों को क्या संसार में प्रत्येक नाना प्रकृत ब्राह्मणों की सभा की। उसमें नाना शास्त्रार्थ हुये, विचार-विनिमय हुये प्रश्नों का उत्तर देने के लिए तत्पर होने लगे। एक नवीन रचना होने लगती है। इसी प्रकार जो मानव परमात्मा को व्यापक रूप में दृष्टिपात करता है जिसको साम्य दृष्टि कहते हैं। इसमें भी प्रभु है। वही चेतना जब जगत् में कार्य करने लगती है, इस दृष्टि से संसार को दृष्टिपात करने लगता है तो उसके द्वारा पाप और पुण्य भी नहीं होता है। आत्मा का सम्बन्ध केवल प्राण के द्वारा रहता है।

(टेप की साईड बदलने के कारण कुछ समाधियों के नाम टेप होने से रह गये हैं)

एक चेतनित समाधि होती है, लोकेश समाधि होती है, नाना प्रकार की समाधियों का वर्णन है बेटा! समय मिलेगा,

समाधि पाठ आयेगा, वेदों के मन्त्र आयेंगे-तो मैं इसको किसी काल में प्रकट करूंगा। आज मुझे इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा है जो मैं इन समाधियों का विवरण करता रहुं। आज के वाक्यों का अभिप्राय क्या यह तुमने जाना है कि आज संसार में मानव को विज्ञान को जानना है, विज्ञान की प्रतिभा में जाना है। आत्मिक विज्ञान, भौतिक विज्ञान इन दोनों का समन्वय करना है। अपने हृदय और मस्तिष्क दोनों को मिलान करना है। परन्तु वह कैसे होगा यह युक्तियां मैंने तुम्हें प्रकट की हैं कि मानव को अपने विचार संकुचित नहीं बनाने हैं व्यापक हृदय बनाता है। व्यापक हृदय में वह जो "ओ३म्" रूपी धागा है उसको उसमें परिणत कर देना है, उसको उसी में अर्पित कर देना है, दोनों तारतम्य लगा करके मानो जो मन और मस्तिष्क की दूरी है का समन्वय करके मानव ऐसी ऐसी वार्त्ता प्रकट करने लगता है उस काल में कि न तो वह कही जाती हैं न श्रवण की जाती हैं और कहीं कहीं तो मानव यह कहता है कि यह सब पाखण्ड है कहीं कहीं प्राणी यह कहता है क्योंकि उसके मस्तिष्क में यह वार्त्ता नहीं आ पाती इसीलिये वह इस प्रकार की वार्त्ता किया करता है।

तो बेटा! आज यह वार्त्ता मैं इसलिये प्रकट कर रहा हूं क्योंकि आज का वेदपाठ ही कुछ इस प्रकार का था। कल का प्रकरण कुछ इस प्रकार का था इसी प्रकार के वाक्य आज मैं प्रकट करने लगा। लोक-लोकान्तरों की चर्चा में मानव के लिये कोई विशेष चर्चा नहीं होती। यह ऐसा कोई महान् कार्य नहीं है अब आत्मवेत्ता [illegible] में आता है। मुझे स्मरण

आता रहता है जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा क्रियात्मक अपने कर्मों को करता था वह क्षेत्र आजतक मुझे स्मरण आता रहता है। आज तो मैं अपने कर्मों के अनुसार अपने कर्मों के भोगों को भोगता जा रहा हूं परन्तु कोई समय था जब मानव के समीप मृगराज उनकी आत्माओं की विवेचनाओं को स्वीकार करते थे। वह समय भी होता है मानव के द्वारा। वही तो एक व्यापक विचार होता है, उसी को तो साम्य विचार कहते हैं, उसी को साम्य अमृत कहा जाता है। अब आज का यह हमारा वाक्य समाप्त। जब मानव संसार में एक क्षुधा पीड़ित व्यक्ति को दृष्टिगत कर सकता है और वह मानव योग की कल्पना करे तो यह असम्भव कहलाता है। मुझे स्मरण आता रहा है संसार का यह साहित्य। आज मैं अधिक चर्चा प्रकट नहीं करना चाहता हूं। वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि मानव को अपने हृदय को विशाल बना करके और अपने ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्वा गति बना करके संसार में जैसा याज्ञवल्क्य जी ने मैत्रेयी को कहा था कि हे मैत्रेयी ? आज तू यह उच्चारण करे कि पति एक ईश्वर होता है यह तुम्हारा वाक्य असम्भव है। यह विचार तुम्हारा संकुचित है। आज तुम्हें यह प्रतीत है पति संसार में आयु नहीं देता। पत्नि का शरीर रुग्ण हो गया है पति स्वास्थ्य नहीं दे सकता। इसी प्रकार आज तुम्हें यह प्रतीत है कि जो मानव स्वयं कर्म करता है वही भोगा करता है। वही उसके समीप आता रहता है। बेटा ! तुम्हें यह प्रतीत है आज मैंने जिन वेदों के पठन-पाठन का क्रम लाखों वर्ष पूर्व किया था आज उसी कर्म के वश पुनः से उच्चारण कर रहा हूं। यही [illegible]

वार्ता प्रकट करूं। वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि मानव एक पापों का वृक्ष बना लेता है वह अशुद्ध होता है, वह मानव को स्वयं को नष्ट कर देता है परन्तु जब मानव अच्छाईयों का वृक्ष उत्पन्न करता है, मानवता का वृक्ष उत्पन्न करता है और उस वृक्ष की छाया में जब विराजमान होता है तो प्रभु का धन्यवाद देता है।

यह है बेटा! आज का वाक्य! अब मुझे समय मिलेगा तो शेष चर्चायें मैं कल प्रकट करूंगा, आज का वाक्य समाप्त। अब वेदों का पाठ होगा।

धन्यवाद! ·

गुरुदेव! आज के आपके शब्दों में सम्भूति गृत्तम भवे अस्तिः सुप्रजाः योगम् ब्रह्म अस्ति सुप्रजाः।

हास्य······ ···बेटा! यह तो प्रायः चलता ही रहता है क्योंकि संसार की विलक्षण गति होती है। समय-समय पर उन वार्त्ताओं की क्षुधा जागरूक होती है उसी प्रकार के वह शब्द मानव के द्वारा स्वाभाविक होते हैं।

अच्छा!

अब वेदपाठ होगा।

